Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2020 SHISRRJ | Volume 3 | Issue 1 | ISSN : 2581- 6306

श्रीमद्भगवद्गीता में सगुणोपासना

सुभाष सिंह
शोधच्छात्र संस्कृत विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

सारांश– भारतीय संस्कृति का प्रवाह सहस्रों वर्षों से वेद और उपनिषद् के काल से लेकर आज तक निरन्तर बहता चला हा रहा है जैसे हिमालय की गोद में गंगा निरन्तर समुद्र की ओर जाती है और मार्ग में असंख्य मानवों को लाभान्वित करती जाती है उसी प्रकार से हमारी धार्मिक धरोहर सहस्रों वर्षों से प्राणियों को प्रभावित करते हुए बहती आ रही है। वेद उपनिषद्, पुराण रामायण, महाभारत हमारे धर्म के प्रकाश स्तम्भ हैं जिनसे आज भी हमें प्रेरणा और शक्ति मिलती है। श्रुति और स्मृति के इस अद्भुत आकाश में सबसे उज्ज्वल नक्षत्र श्रीमद्भगवद्गीता है।

मुख्य शब्द– श्रीमद्भगवद्गीता, रामायण, महाभारत

श्रीमद्भगवद्गीता को उपनिषदों का सार माना गया है।[1] श्रीमद्भगवत प्रस्थानत्रयी में स्मृति प्रस्थान के रूप विख्यात हैं जो एक सामान्य मानव को सगुणोपासना द्वारा ब्रह्म से साक्षात्कार कराकर मुमुक्षुत्व को प्राप्त कराने में सक्षम है। परमात्मा के सगुण रूप में सर्वमान्य ईश्वर श्री कृष्ण को वक्ता के रूप में प्रस्तुत करके व्यास ने गीता को उपनिषदों की ही श्रेणी में रखा है उपनिषद् दर्शन की जटिलताओं और वैदिक आध्यात्मवाद की न्यूनताओं का निराकरण करके अत्यन्त सरल, सुस्पष्ट एवं सर्वसाधारण के लिए बोधगम्य स्वरूप में ब्रह्मविद्या को प्रस्तुत करने का श्रेय निःसन्देह श्रीमद्भगवद्गीता को ही प्राप्त होता है। श्रीमद्भगवद्गीता में सगुणोपासना की संकल्पना मुख्य रूप से है। क्योंकि निर्गुण उपासना केवल साधन चतुष्टय सम्पन्न सूक्ष्म दृष्टि वाला ही कर सकता है जो कि बहुत ही जटिल उपासना पद्धति है सगुण उपासना में हम परमात्मा को किसी मूर्ति या मानव में कल्पना कर लेते हैं और पूजा करने लगते हैं। अर्जुन जब तक भगवान् श्रीकृष्ण के शरण नहीं हुए तब तक भगवान ने उपदेश नहीं दिया जब अर्जुन ने भगवान के शरण होकर अपने कल्याण की बात पूछी, तब भगवान ने गीता का उपदेश आरम्भ किया।

भगवान कहते हैं कि मैं सम्पूर्ण जगत् का निमित्त और उपादान कारण हूँ अर्थात् सबका आदि कारण हूँ।[2] दैवी प्रकृति के आश्रित महात्मा लोग मुझे सम्पूर्ण प्राणियों का आदि और अविनाशी जानकर अनन्य मन से मेरा भजन करते हैं। जो सबमें मेरे को देखता है उसके लिए मैं अदृश्य नहीं होता और न वह मेरे लिए अदृश्य होता है। जो योगी मुझे तथा परमात्मा को अभिन्न जानते हुए परमात्मा की भक्तिपूर्वक सेवा करता है, वह सभी प्रकार से मुझमें सदैव स्थित रहता है।[3]

मैं अव्यक्त रूप से सम्पूर्ण जगत् में व्याप्त हूँ, प्राणियों के अन्तःकरण में आत्मारूप से ही मैं स्थित हूँ। भगवान् कहते हैं कि मैं ही सब प्राणियों के हृदय में अन्तर्यामी रूप से स्थित हूँ मुझसे ही स्मृति, ज्ञान तथा विस्मृति होती है। मैं ही वेदों के द्वारा जानने के योग्य हूँ।[4] सृष्टि निर्माण तथा इसके सुचारु रूप संचालन हेतु इसके एक अथवा अनेक सगुण, साकार, परमानन्द स्वरूप, परमसत्तावान परग्रहम परमपिता के तार्किक, व्यावहारिक तथा यथार्थ स्वरूप को उद्घाटित करने का श्रेय भगवान् श्रीकृष्ण की अमृतवाणी श्रीमद्भगवद्गीता को ही प्राप्त है जिसमें साक्षात् परमात्मा वासुदेव ही सर्वव्यापी हैं[5]–

भगवान श्रीकृष्ण ने स्वयं कहा है कि मैं ईश्वरों के ईश्वर परमपुरुष का पर्याय हूँ, समस्त ऐश्वर्य तथा सिद्धियों का स्वामी हूँ, मैं परमसुखी हूँ तथा अपने बलाबल द्वारा इस जगत् को आक्रान्त कर सकता हूँ[6]।

भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं कि हे धनंजय मैं उस भगवान् को जानता हूँ जो अन्धकार की समस्त भौतिक अनुभूतियों से परे है वासुदेव का वह वास्तविक स्वरूप जिसके बारे में वह स्वयं कहते हैं कि वहां तक बहुत कम ही व्यक्ति पहुंच पाते हैं। इस अदृश्य आश्चर्य के सामने शून्यता जो परिपूर्ण है पूर्णता जो शून्य है–शब्द निरर्थक परिचयन पत्रों के समान बेकार साबित होते हैं और पूरे विश्व की थाह लेने वाला मन भी यहां चकराकर डूब जाता है और मौन हो जाता है। जिन्होंने इसको जाना है और उनके होंठ आदरपूर्वक भय से सिल जाते हैं, यह जानकर कि वे उसे जानते नहीं वे इस अगाध समुद्र मे अपने विचार की डोर से थाह लेना बन्द कर देते हैं। इस पावन रहस्य के आगे हमें नतमस्तक हो जाना चाहिए और अपने शब्दों को उस क्षेत्र के लिए रखे रहना चाहिए जो उसके लिए उपयुक्त है। कृष्ण कहते हैं कि यद्यपि प्रव्यक्त विश्व माया है फिर भी वह दैवी माया है और उसके स्पंदनशील हृदय में वे स्वयं ही स्थित हैं। यह सम्पूर्ण संसार धागे में सूत की मणियों की तरह मेरे ही ओत–प्रोत हैं[7]।

भगवान वासुदेव कहते हैं कि हे अर्जुन! तुम जो भी देखना चाहो चर–अचर सहित सम्पूर्ण जगत् को अभी देख लो। अर्जुन ने देवों के देव भगवान् के शरीर में एक जगह स्थित अनेक प्रकार के विभागों में विभक्त जगत् को देखा और कहा हे देव! मैं आपके शरीर में सम्पूर्ण देवताओं को, प्राणियों को, कमलासन पर बैठे ब्रह्मा जी को, शंकर जी को ऋषियों को और दिव्य सर्पों को देखता हूँ।

सूर्य, चन्द्रमा, अग्नि आदि में मेरा ही तेज है अर्थात् इनको मैं ही प्रकाशित करता हूँ। भगवान् वासुदेव कहते हैं कि सम्पूर्ण जगत् की गति, भर्ता, प्रभु, साक्षी, निवास, शरण, प्रभव, प्रलय, स्थान, निधान तथा अविनाशी बीज में मैं ही हूँ। उपर्युक्त उपासनाओं का तात्पर्य यह है कि सबके बीज आधार प्रकाशक स्वामी शासक एक भगवान् ही हैं, परन्तु साधकों की रुचि, योग्यता और श्रद्धा–विश्वास की विभिन्नता के कारण उनकी उपासनाओं में भेद हो जाता है। तत्व से कोई भेद नहीं है क्योंकि परिणाम में सम्पूर्ण उपासनाएँ एक हो जाती हैं। भगवान् की अप्राप्ति का दुख सभी साधकों का एक होता है और साधन की पूर्णता होने पर भगवत्प्राप्ति का आनन्द भी सबको एक ही होता है, पर साधकों की रुचि, योग्यता और विश्वास अलग–अलग होने से उपासनाएं अलग–अलग होती है। उपासना के प्रारम्भ में साधक के भाव और योग्यता की प्रधानता होती है और सिद्धि में तत्व की प्रधानता होती है। भाव और योग्यता तो व्यक्तिगत हैं पर तत्व व्यक्तिगत नहीं हैं प्रत्युत सर्वगत हैं।

संदर्भ सूची

1. सर्वोपनिषदां गावों दोग्धा गोला नन्दनः
2. अहं कृत्स्नस्य जगतः प्रभवः प्रलयस्तथा।।
3. सर्वभूतस्थितं यो मां भजत्येकत्वमास्थितः।

   सर्वथा वर्तमानोऽपि से योगी मयि वर्तते।।
4. सर्वस्य चाहं ह्दि सन्निविएटो, मन्तः स्मृतिर्ज्ञानम पोहनं च।

   वैदैश्च सवैरहमेव वेद्यो वेदान्त कृद्वे, विदेन चाहम्।।

5. बहुनां जन्मना मन्ते ज्ञानवान्यां प्रपधते।

वासुदेवः सर्वमति स महात्मा सुदुर्लभः।

6. ईश्वरोध्हमहं भोगी सिद्धोऽहं बलवान्सुखी।

7. मन्तः परतरं नान्यत्किम्चिदस्ति धनंजय।

मयि सर्वनिदं प्रोतं सूत्रो मणिगणा इव।।